Padege , Likhege
समाज विकासमाला
पढ़ेंगे, लिखेंगे
सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

समाज-विकास-माला : १०८

पढ़ेंगे-लिखेंगे....

अपढ़ता को दूरकरने की प्रेरणा देने वाली पोथी

लेखिका
सुशीला

संपादक
यशपाल जैन
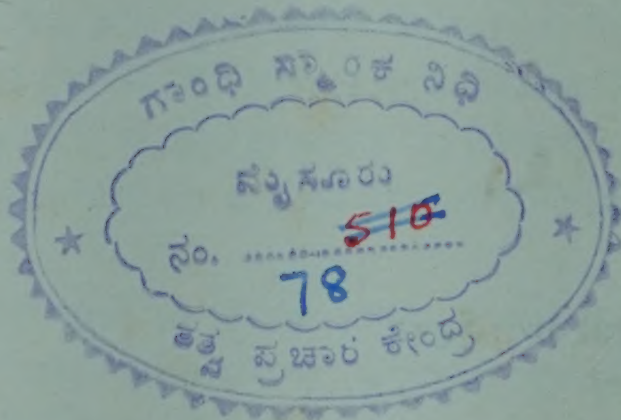
सस्ता साहित्य मंडल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

पहली बार : १९५९
मूल्य
सैंतीस नये पैसे

मुद्रक
हिंदी प्रिंटिंग प्रेस
दिल्ली

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों का शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा। बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जबसे ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोलचाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

यह पुस्तक-माला इन्हीं बातों को सामने रखकर निकाली गई है। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव बड़ी सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में भी विशेष ध्यान रखा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में किसी सुधार का गुंजाइश मालूम हो, तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

—मंत्री

पाठकों से

हमें आजाद हुए ग्यारह साल हो गये, लेकिन आज भी हमारे देश के निवासी बहुत बड़ी संख्या में अपढ़ हैं। वे देहातों में रहते हैं, खेती-बारी करते हैं, किन्तु पढ़ाई के नाम पर उनके लिए 'काला अक्षर भैंस बराबर' है।

वैसे तो आदमी के लिए सबसे महत्व की चीज़ उसका आचरण है, फिर भी पढ़ाई जरूरी है, क्योंकि उससे ज्ञान बढ़ता है और ज्ञान बढ़ने से आदमी की निगाह बड़ी होती है। निगाह बड़ी होने से आचरण पर भी असर पड़ता है।

इस किताब में बड़े रोचक ढंग से बताया गया है कि पढ़े-लिखे न होने से क्या हानियां हैं।

आप इसे पढ़ें और कोशिश करें कि हमारे देश से निरक्षरता का भूत जल्दी-से-जल्दी भाग जाय।

—संपादक

पढ़ेंगे-लिखेंगे....

आज भी हमारे देश में बहुत से ऐसे लोग हैं, जिनके लिए काला अक्षर भैंस बराबर है, जो न पढ़ना जानते हैं, न लिखना जानते हैं। कभी सोचते ही नहीं। हमारे रामू दादा ने यह तय किया है कि वे उन सबको पढ़ना-लिखना सिखायेंगे। हर साल कालेज के लड़के-लड़कियां, वकील, जज, कमर कस कर गांवों में जाते हैं और लोगों को पढ़ना सिखाते हैं। रामू दादा भी उन्हीं में से एक हैं। घूमते-घूमते एक बार वह एक गांव में पहुंचे। पहले भी हो आए थे। पिटते-पिटते बचे थे। लेकिन पिटने से डर जायं तो रामू दादा कौन कहे। इस बार उन्होंने चौपाल में सब लोगों को इकट्ठा किया। बड़ा शोर मचा। पर रामू दादा घबराये नहीं। खड़े होकर सबको चुप किया और बोलने लगे--

रामू दादा—बुजुर्गो, दोस्तो, साथियो, मैं आपके लिए नया नहीं हूं। कई बार आया हूं, आपसे लड़ा हूं। पर आपने मुझे सदा प्यार किया है। (लोग हंसते हैं) आप हंसते हैं। मेरा जैसा ढीठ कभी आपको

मिला भी तो नहीं है। असल में वह बात जिसके लिए मैं आता हूं, कुछ ऐसी ही है। आसानी से उसकी ओर ध्यान नहीं जाता। उस बात की भूख रोटी की भूख जैसी नहीं है। रोटी नहीं मिली तो रो पड़े, लेकिन वह चीज न मिले तो आप लोग परवाह नहीं करते। आप शायद जानना चाहेंगे कि वह क्या बात है। लीजिए, मैं आपको एक कहानी सुनाता हूं। एक गांव है काजीपुर। वहां एक नौजवान रहता है। उसका नाम है फतहसिंह। एक बार उसने साहूकार से कुछ रुपये उधार लिये। आप सब भी लेते हैं। पर बेचारा वह पूरे रुपये चुका न सका। साहूकार ने पंचायत में मुकद्दमा दायर कर दिया। पंचों ने फतहसिंह को बुलाया। मुकद्दमा शुरू हुआ। फतहसिंह ने मान लिया कि उसनें रुपये लिये थे।

फतहसिंह——पंच परमेश्वर हैं। मैंने सेठजी से पचास रुपये लिये थे।

पंच——(एकदम) पचास रुपये! कागज में तो दो सौ रुपये लिखे हैं।

फतहसिंह——(कांप कर) दो सौ!

पंच--हां, ढाई सौ का मुकद्दमा है। पचास रुपये सूद के हैं।

फतहसिंह--पंच-परमेश्वर की दुहाई ! मैं मारा गया। मैंने पचास रुपये लिये थे। सेठजी ने दो सौ लिख लिए होंगे। मैं तो अनपढ़ हूं।

सेठ--पंच-परमेश्वर की जय हो ! आसामी मुझ पर झूठा दोष लगाता है। भला मैं ऐसा कैसे कर सकता हूं !

पंच—फतहसिंह, जरा देखो, कागज पर अंगूठा तुम्हारा ही है न ?

फतहसिंह—(देख कर) जीहाँ, यह तो मेरा ही है। देख लीजिए, पंच साहब, अंगूठा इसीका है। भला मैं पचास देकर दो सौ कैसे लिख सकता था? सरकार, मैं भी आस-औलाद वाला हूं। और सरकार, यह अनपढ़ है तो क्या, यह दूसरों से पढ़वा सकता था।

पंच--(कुछ सोच कर) हूं...फतहसिंह, पंचायत के सामने जो कागज हैं और जो सबूत हैं, उससे तो यही साबित होता है कि तुमने रामधन साहूकार से दो सौ रुपये लिये थे।

फतहसिंह--(गिड़गिड़ाकर) पंच-परमेश्वर, दुहाई,

दुहाई ! दया कीजिए, मैं अनपढ़ हूं। सेठजी दो सौ क्या, दो हजार भी लिख लेते...

सेठ--देखिए पंच-परमेश्वर, आसामी फिर मुझपर दोष लगाता है।

पंच--फतहसिंह, फैसला तो सबूत देखकर ही किया जाता है। सबूत तुम्हारे सामने है। सेठ जो कुछ कहता है, वही ठीक लगता है।

रामूदादा--और बेचारे फतहसिंह पर दो सौ रुपये की डिगरी हो गई। वह रोता रहा, पर किसी ने कुछ नहीं सुना। वह अनपढ़ था न ! अगर पढ़ा हुआ होता तो सेठजी पचास की जगह दो सौ कभी न लिख पाते। आप तो इस बात को अच्छी तरह जानते हैं। आपमें से बहुतों के साथ ऐसा हुआ होगा। यही बात बताने के लिए मैं आज फिर आया हूं। अनपढ़ रहना पाप है, गुलामी की जड़ है। लेकिन आप सब लोग तो चुपचाप बैठे हैं। शायद आपको मेरी बात पर यकीन नहीं आया। अच्छा एक और कहानी सुनाता हूं। एक औरत की कहानी है। उसका मालिक कमाने के लिए दिशावर चला गया था। महीनों बीत गये, कोई खबर नहीं आई। बेचारी औरत रोती रहती और

दिन काटती रहती । एक दिन एक आदमी उसके पास आया और उसे एक पत्र दिया ।

आदमी—अरे ओ गबरू की बहू, ले चिट्ठी आई है। बड़ी रोया करे थी । गबरू की जान पड़े है ।

गबरू की बहू—जी, उनकी चिट्ठी है ! हे देवी मैया, तेरी जय हो ! हे शंकर भगवान, थारी जय हो ! आखिर चिट्ठी आ गई ! उसी की होगी, और मुझे कौन चिट्ठी भेजेगा ।

आदमी—तब तो मुंह मीठा करा, भगवान ने तेरी सुन ली ।

गबरू की बहू—जी...मैं...जरूर करवाऊंगी । जरा पढ़ दीजिए ।

आदमी—पढ़ दूं ! ना बहू, मैं तो पढ़ना ना जानूं । अपने गांव में तो बस नंबरदार का बेटा धरमू जाने है ।

गबरू की बहू—तो मैं वहीं जाऊं ?

आदमी—पर धरमू तो यहां नहीं है, शहर गया है। कोई सात-आठ दिन में लौटेगा ।

गबरू की बहू—(घबरा कर) सात-आठ दिन में ! हे भगवान, मैं क्या करूं !

आदमी—करेगी क्या, चिट्ठी सम्हालकर रख । आ

गई, यही क्या कम खुशी है। जब धरमू आए तो पढ़वा लीजियो।

रामू दादा——यही हुआ, बाहर के आंसू थम गये, पर दिल की धड़कन बढ़ गई। हर घड़ी वह सोचती रहती कि न जाने चिट्ठी में क्या लिखा है। अच्छा तो है। हां, अच्छा ही होगा, तभी तो चिट्ठी भेजी है। शायद आने को लिखा हो। शायद आजकल में आ जाय। वाह ! कैसा अच्छा रहेगा, अपनी चिट्ठी आप पढ़ेगा। इस तरह सोचते-विचारते सात दिन बीत गये। धरमू शहर से लौट आया। सुनते ही गबरू की बहू चिट्ठी लेकर उसके पास दौड़ी गई :

गबरू की बहू——अजी भैयाजी, बड़ी बाट देख रही थी थारी। यह चिट्ठी तो पढ़ना।

धरमू——(हंसकर) किसकी चिट्ठी आ गई ? गबरू की ? ला तो।

गबरू की बहू—लो जी। जरा जोर से पढ़ो।···अरे, आप रुक क्यों गये ?

धरमू—यह चिट्ठी गबरू ने नहीं भेजी, उसके एक साथी ने भेजी है। लिखा है, गबरू को दस दिन से निमोनिया हो रहा है।

गबरू की बहू--(घबराकर) हाय राम ! नमूनिया !
आपने ठीक तो पढ़ा ! उसे नमूनिया हो गया ?

धरमू--हां, उसे निमोनिया हो गया है। तुझे बुलाया है।

गबरू की बहू--हाय-हाय ! यह क्या हुआ ! सात दिन हो गये चिट्ठी आये...

रामू दादा—हां, सात दिन के बाद उसे पता लगा। फौरन दौड़ी गई। लेकिन विधाता अपना काम कर चुका था। गबरू वहां चला गया था, जहां से कोई लौट कर नहीं आता। यह क्या, आप लोगों

की आंखों में आंसू आ गये ? हां भाई, रोने की तो बात ही है। अगर गांव में पढ़े-लिखे लोग होते तो गबरू की बहू अपने बीमार मालिक के पास पहुंच जाती। शायद सेवा करके उसे बचा लेती। अपनों का पास रहना बहुत बड़ी दवा है। लो दोस्तो और भाइयो, मैंने आपको अपनी बात बता दी। आपने सुना होगा कि जानवर और आदमी में एक ही अन्तर होता है, ज्ञान का। जिसमें ज्ञान नहीं वह आदमी भी जानवर है। ज्ञान की बातें किताबों में लिखी रहती हैं। रामायण भी तो एक किताब ही है। आप उसकी कथा सुना करते हैं। आपके मन में भी होता होगा कि काश, हम भी इसे पढ़ सकते ! शायद अब भी आप यही सोच रहे हैं कि लानत है उन पर, जो पढ़ना नहीं जानते। आप ठीक सोच रहे हैं। 'सकल पदारथ या जग मांही, करम-हीन नर पावत नाहीं।'' यह भी रामायण में ही लिखा है। सब कुछ इस दुनिया में ही है, जो कर्महीन हैं, उन्हें कुछ नहीं मिलता। आपके इस देश में सौ में सत्तासी आदमी ऐसे ही कर्महीन हैं। जानते हैं आप, किसी दिन आपका यह देश संसार का गुरु था। और आज ?

जाने दीजिए, आपको दुख होगा। अब तो हम आजाद हो गये हैं। अब तो हमको इस कलंक को दूर कर देना चाहिए। आज भी जो लोग पढ़ने से इंकार करते हैं, वे जीने से इंकार करते हैं। हैं अभी ऐसे लोग। अभी मेरा एक साथी एक गांव में गया था। सारा गांव उसके पीछे पड़ गया।

नंबरदार––महाशय जी, नमस्ते।

समाज-सेवक—नमस्ते साहब। आइये, कैसे दर्शन दिए?

नंबरदार––अजी, क्यों कांटों में घसीटते हो! दर्शन तो आपके होते हैं। आप समाज की सेवा करते हैं।

समाज-सेवक––अजी साहब, मैं तो सरस्वती का दास हूं, उसी का संदेश आपको सुनाने आया हूं। सबसे पहले आप उसीकी पूजा तो करते हैं––

सदा सरस्वती दाहिने गोरी पुत्र गणेश।
पांच देव रक्षा करें ब्रह्मा विष्णु महेश॥

नंबरदार––जीहां, जीहां। सरस्वती तो विद्या की देवी है और विद्या से बड़ा कोई धन नहीं होता।

समाज-सेवक—आप तो सबकुछ जानते हैं। अब देखो न, संसार में ऐसे अनेक देश हैं, जहां का

बच्चा-बच्चा पढ़ा-लिखा है। बहुत हुआ तो सौ पीछे चार-पांच आदमी अनपढ़ मिलेंगे। लेकिन एक अपना देश है...

नंबरदार––अजी, अपने देश की बात और है। यहां तो बस शहर वाले पढ़लें, ठीक है। गांव-वालों के पीछे आप लोग क्यों पड़े हैं?

समाज-सेवक––हुं...क्या कहा? नंबरदार साहब, हमारे देश में सात लाख गांव हैं और उनमें लगभग अट्ठाईस करोड़ लोग रहते हैं यानी भारत का बहुत बड़ा भाग गांवों में ही रहता है। वे न पढ़ेंगे तो कौन पढ़ेगा।

नंबरदार––(तेजी से) आप तो यह कहेंगे ही, लेकिन मैं आपसे कहे देता हूं, गांववाले पढ़ना सीख गये तो आफत आ जायगी। सिर उठा कर बातें करेंगे, अधिकार मांगेंगे, आपके बराबर बैठेंगे, आपका विरोध करेंगे।

रामू दादा––नंबरदार की ये बातें सुन कर मेरा साथी हंस पड़ा। बेचारे इतना भी नहीं जानते थे कि गांव अनपढ़ रहे तभी देश में गुलामी आई। अगर वे पढ़े-लिखे होते तो अंग्रेज कैसे राज करते? गोखले का नाम तो तुमने सुना होगा। गांधीजी

उनको अपना गुरु मानते थे। आज से पचास साल पहले ही उन्होंने इस बात की ओर हमारा ध्यान दिलाया था। उन्होंने कहा कि अपनी आमदनी का सबसे बड़ा भाग हमें शिक्षा पर खर्च करना चाहिए, सबको पढ़ाना चाहिए, पढ़ाने की फीस नहीं लेनी चाहिए। लेकिन अंग्रेजों ने उनकी बात नहीं सुनी और वह अपनी बात कहते रहे। फिर गांधीजी आये। और फिर तो तुम जानते ही हो कि गोखले की बात सबको माननी पड़ी। अंग्रेजो को भारत छोड़ना पड़ा। इसलिए भाई, मेरा वह साथी डरा नहीं। उसने पंचायत को बुलाया, उनको समझाया। लेकिन वे लोग भी तो नंबरदार के चेले थे।

एक आवाज--हम अपने बालकों को नहीं पढ़ावेंगे।

दूसरी आवाज--हम उन्हें बाबू नहीं बनावेंगे।

तीसरी आवाज--अगर वह पढ़-लिख गये तो खेतों में काम कौन करेगा?

समाज-सेवक--भाइयो, एक साथ न बोलिये। मैं आपकी बात समझता हूं। आप मानते हैं कि बच्चे पढ़ गये तो बिगड़ जायंगे, पर यह विचार ठीक नहीं है। पढ़ने का मतलब यह नहीं है कि

काम करना छोड़ दिया जाय, बल्कि पढ़-लिख-कर तो वे अधिक काम करेंगे।

एक आवाज——जी नहीं, पढ़े-लिखे आराम-तलब और हठी होते हैं।

दूसरी आवाज——वे हमसे नफरत करते हैं।

समाज-सेवक——आप ठीक कहते हैं। शुरू में ऐसा ही होता है। जब थोड़े लोग पढ़े हुए हों, बहुत अनपढ़ हों, तो उनके बीच में एक खाई खुद जाती है। पढ़े-लिखों को घमंड हो जाता है। वे अनपढ़ मूर्खों को देखकर हंसते हैं। आपने सुना होगा कि हमारे शास्त्रों में मूर्खों की मां को 'बांझ' कहा है। किसी औरत को बांझ कहना उसे सबसे बड़ी गाली देना है। सो भाइयो, सब पढ़ जायंगे तो न कोई छोटा रहेगा, न बड़ा। तब कोई किसी से नफरत नहीं कर सकेगा, सब बराबर हो जायंगे। यह तो एक पहलू है, दूसरे पहलू पर भी सोचना चाहिए। पढ़े-लिखे लोग खेती-बाड़ी की उन्नति कर सकते हैं।

एक आवाज——वाह महाराज, जब वे काम ही नहीं करेंगे, तो उन्नति कहां से होगी!

समाज-सेवक——काम क्यों नहीं करेंगे? सुनिये, जब वे

पढ़ेंगे कि जापान में एक बीघा जमीन में उतना धान पैदा होता है जितना हमारे देश में तीन बीघों में, हालैण्ड की एक गाय उतना दूध देती है, जितना हमारे देश की चार गायें, तो बताओ कि क्या वे भी अपने देश में वैसा ही नहीं करना चाहेंगे ?

दूसरी आवाज--लेकिन क्या सचमुच आप जो कुछ कह रहे हैं, वह ठीक है ?

समाज-सेवक--देखा, आप भी चौंके ! भाईसाहब, यह तो मैंने आपको एक छोटी-सी मिसाल दी है। आप नहीं जानते कि आज आपके देश में करोड़ों मन अनाज बाहर के छोटे-छोटे देशों से आता है। आपको शर्म नहीं आती कि इतना बड़ा देश अपना पेट आप नहीं भर सकता।

एक आवाज—कहते तो आप ठीक हैं।

दूसरी आवाज--सचमुच यह तो बुरी बात है।

तीसरी आवाज--बेशक, हमें शर्म आनी चाहिए।

समाज-सेवक--बेशक, हमको शर्म आनी चाहिए। हम इन बातों को जानते तो कभी ऐसा नहीं करते। यह सब अज्ञान के कारण हुआ न और वह अज्ञान दूर कैसे होगा ? पढ़ने से। आपके बच्चे पढ़ेंगे, समझेंगे, समझ से काम करेंगे। फिर देखिए, कुछ

ही सालों में आपकी बंजर भूमि सोना उगलने लगेगी, आपकी गाएं इतना दूध देने लगेंगी कि यह सारा देश दूध में नहा उठेगा, सारे देश में दूध की नदियां बहने लगेंगी।

कई आवाजें––(एक साथ) हां-हां, आप ठीक कहते हैं। हमारे बच्चे पढ़ेंगे, जरूर पढ़ेंगे।

समाज-सेवक––मुझे बड़ी खुशी है। कोशिश करने पर क्या काम नहीं हो सकता।

कई आवाजें––(एक साथ) हम तैयार हैं। हम वही करेंगे, जो आप कहेंगे।

रामू दादा––जैसा कि होना चाहिए था, मेरा वह साथी धुन का पक्का था। समझा-बुझाकर गांव-वालों को राह पर ले आया। वह वहीं जम कर बैठ गया। कभी-कभी उसके सामने बड़ा करुण नाटक होता था। वह भी घबरा उठता था। एक दिन गांव की एक बुढ़िया उसके पास आई। बहुत गरीब और कंकाल थी, उस पर रो रही थी। समाज-सेवक का मन भर आया।

समाज-सेवक––मां, तुम क्यों रो रही हो ? तुम्हें क्या तकलीफ है ?

बुढ़िया––बेटा, मैं बहुत गरीब हूं। मेरे पास कुछ नहीं

है। भीख मांग कर दो रुपये लाई हूं।

समाज-सेवक--तुम्हें चाहिए क्या मां ? मुझे बताओ।

बुढ़िया--बेटा, यह रुपये तेरे ही लिए लाई हूं।

समाज-सेवक--मेरे लिए !

बुढ़िया—हां बेटा, तेरे लिए। मेरा कोई नहीं है। बेटा-बहू सब मर गए। एक पोता है, किशोरी। उसे तूने स्कूल में भर्ती कर लिया है। वह पढ़ेगा तो मज़-दूरी कौन करेगा ? पेट कौन भरेगा ? तू ये रुपये ले ले और उसे छोड़ दे।

रामू दादा--यह सुन कर वह समाज-सेवक कांप उठा। ऐसी बातें उसके साथ बार-बार होती थीं, लेकिन वह निराश नहीं हुआ। वह जानता था कि देश गरीब है और गरीबी का कारण है अशिक्षा। रूस और इंगलैंड में भी कभी ऐसे सवाल पैदा हुए थे। सवाल जब पैदा होता है तो उसे हल भी किया जाता है। समाज-सेवक ने भी उनको हल किया। पढ़ना हर वक्त तो नहीं होता। सारा दिन काम करके चार-पांच घंटे निकाले जा सकते हैं और फिर अब तो पढ़ने के साथ-साथ दस्तकारी भी सिखाई जाती है। उस समाज सेवक ने यही किया। गांव-वालों को पढ़ने के गुण बताये, दस्तकारी का लाभ

बताया, सफाई का ढंग बताया। बहुत से लोग पढ़ना सीख गये। फिर उसने एक दिन मेला लगाया।

(मेले का शोर)

गोविंद——अरे गोपाल, मंच को छोड़, उधर देख, वह क्या है ?

गोपाल—अहो...हो...यह तो लाल कपड़ों पर किसी ने चांदी की तस्वीरें चिपका दी हैं। पर ये तस्वीर कैसी हैं ?

गोविंद——अबे मूर्ख, ये तस्वीरें नहीं हैं, हरूफ़ हैं ?

गोपाल——ओहो, यह लिखावट है। वह देख, जीवन आ रहा है। पूछो (पुकार कर) भैया, यह क्या लिखा है ?

जीवन——ओहो...यहां गोपालभैया और गोविंद-काका पढ़ रहे हैं। यही लिखा है——निरक्षरता पाप है, अशिक्षा आदमियों को जानवर बना देती है, शिक्षा गरीबी दूर करती है, अपने बच्चों को स्कूल भेजो, दिन में काम करो, रात को पढ़ो।

गोविंद—ओहो, यह तो बड़ी ज्ञान की बातें लिखी हैं। जीवन, तुम सचमुच तकदीर वाले हो, तुम पढ़ सकते हो।

जीवन—इसमें तकदीर की क्या बात है ! तुम भी पढ़ सकते हो। देखो-देखो, मास्टरजी गीत गा रहे हैं।

मास्टरजी—बच्चो, अब हम तुम्हें दूसरा गीत सुनाते हैं। पहले हम बोलेंगे, फिर तुम दुहराना।

घंटा बोला चलो मदरसे
निकलो निकलो निकलो घर से।
घंटा बोला चलो मदरसे।
कोट पहिन लो, टोपी ले लो।
कापी ले लो, बस्ता ले लो।

बाहर झट निकलो भीतर से।
घण्टा बोला चलो मदरसे।

गोविंद—वाह भाई वाह, यह तो खूब रहा, गीत का गीत गाना और मदरसे चलने का शौक पैदा करना!

गोपाल—अभी क्या है, वह देखो, एक और टोली आई। सुनो, वह भी गा रही है—

धन से घर भर देने वाली,
नाम बड़ा कर देने वाली,
सब संकट हर देने वाली,
मन मांगा वर देने वाली,
विद्या मेरी माता है,
सभी सुखों की दाता है।
विद्या बिना आदमी कैसा,
बिना पंख के पंछी जैसा,
विद्या देती है बल पैसा,
विद्यावान मनुष्य हमेशा,
सबके मन को भाता है,
विद्या मेरी माता है।

गोविंद—विद्या मेरी माता है, विद्या सब की माता है।

गोपाल—मैं तो भाई, अभी सीधा स्कूल जाता हूं।

जीवन--वह तो जाना ही है, पर आओ, जरा यह नाटक तो देख लें। डरो नहीं, पैसे नहीं लगेंगे। लो, यहां बैठ जाओ, खेल शुरू हो गया। लो, परदा भी उठ गया। यह तो समाज-सेवक कुछ कह रहे हैं।

सूत्रधार--एक समय था जब इस देश में विद्या और सरस्वती की घर-घर में पूजा होती थी। जिस राजा के राज में कोई अनपढ़ रह जाता था, उस राजा की बड़ी निंदा होती थी। जो मां-बाप अपने बच्चों को नहीं पढ़ाते थे, वे औलाद के दुश्मन माने जाते थे। वे अनपढ़ लोग किसी सभा में जाते थे तो ऐसा लगता था जैसे हंसों की सभा में कौए पहुंच गए हों। इस नाटक में एक ऐसी ही कहानी कही गई है। सत्यकाम जावाल हमारे देश के एक बहुत बड़े ऋषि हुए हैं। वे दासी के बेटे थे। कोई नहीं जानता था कि उनके पिता कौन हैं। बचपन में वह इधर-उधर खेला करते थे। एक दिन उन्होंने पाया कि उनके सब साथी एक-एक करके गुरुकुल चले जारहे हैं। उन्होंने सोचा, मैं भी गुरुकुल जाऊंगा। पर उनकी मां ने उन्हें गुरुकुल नहीं भेजा। वह उदास रहने लगे। एक दिन

ऐसा हुआ कि वह अकेले रह गए। घूम-घाम कर घर लौटे। मां से कहा। क्या कहा, यह इस नाटक में देखिए।

(सूत्रधार चला जाता है, नाटक शुरू होता है, जावाला घर में बैठी काम कर रही है। सत्यकाम दौड़ता हुआ आता है।)

सत्यकाम——(पुकारता हुआ आता है) मां, मेरे साथी गुरुकुल चले गये। मैं भी जाऊंगा।

जावाला——(कांप कर) तुम भी गुरुकुल जाओगे!

सत्यकाम——हां मां, मेरा भी उपनयन होना चाहिए। भृगु मेरे जितना ही है। शिलक और शौनक तो मुझसे भी छोटे थे।

जावाला——थे तो, पर···

सत्यकाम——नहीं-नहीं, मां, मैं गुरुकुल जाऊंगा। तू मुझे बहुत प्यार करती है। गुरुकुल में गुरुजी भी तो प्यार करते हैं।

जावाला——करते हैं बेटा, वे तो मां से भी बढ़ कर प्यार करते हैं। लेकिन...

सत्यकाम——लेकिन क्या मां? जल्दी बताओ, मेरा गोत क्या है? मैं गुरुकुल जाऊंगा।

जावाला——तेरे गोत का ही तो झगड़ा है।

सत्यकाम--झगड़ा कैसा ? गुरुजी सबसे पहले गोत ही तो पूछते हैं। सबसे पूछते हैं।

जावाला--(एकदम) अच्छी बात है, तू भी जा। जब गुरुजी पूछें तो कह देना, 'मुझे मेरे पिता का गोत नहीं मालूम। मेरी मां का नाम जावाला है और मेरा नाम सत्यकाम। मैं सत्यकाम जावाल हूं।'

सत्यकाम--मां, मैं ऐसा ही कहूंगा। तू सोच मत कर। मैं वहां बहुत अच्छी तरह रहूंगा। अच्छा मां, प्रणाम।

जावाला--जीओ बेटा। पण्डित बनो !

(सत्यकाम चला जाता है, उसकी मां भी चली जाती है। मंच पर गुरुकुल लगता है। गौतम ऋषि पढ़ा रहे हैं, ब्रह्मचारी पढ़ रहे हैं। तभी सत्यकाम आकर प्रणाम करता है।)

गौतम--जीओ बेटा। क्या चाहते हो ?

सत्यकाम--गुरुदेव, मैं आपके पास रह कर पढ़ना चाहता हूं।

गौतम--विचार सुन्दर है। तुम्हारा गोत क्या है बेटा ?

सत्यकाम--महाराज, मेरी मां ने कहा है कि वह पिता का गोत नहीं जानती। मेरी माता का नाम जावाला है, मैं सत्यकाम जावाल हूं। मेरी मां ने मुझसे

यही कहा है।

गौतम---मां ने तुमसे ऐसा कहा है।

सत्यकाम—हां गुरुदेव, ऐसा ही कहा है।

गौतम---समझा ! अच्छा, तुम गुरुकुल में रह सकते हो। तुम सच बोलना जानते हो। ब्रह्मचारी में यही गुण तो होना चाहिए। जाओ, समिधा ले आओ, हम तुम्हें उपनयन देंगे।

(परदा गिर जाता है।)

जीवन—देखा गोपालभैया, हमारे देश में पढ़ने का कितना चाव था और गुरुजी पढ़ाते समय छोटे-बड़े, ऊंच-नीच का भेद नहीं करते थे।

गोपाल---तभी तो संसार हमारी पूजा करता था।

जीवन---यदि हम पढ़-लिख कर गुणवान बनें, तो आज भी हमारी पूजा हो सकती है।

गोपाल---तो चलो पाठशाला चलें।

गोविंद---पर हम तो इतने बड़े हैं।

जीवन---तो क्या हुआ ? इस पाठशाला में साठ-साठ साल के बच्चे पढ़ते हैं। रात को भी पाठशाला लगती है। जादू की लालटेन से तस्वीर दिखाते हैं।

गोबिंद---तो चलो।

(तभी एक बुढ़िया भी वहां आती है।)

बुढ़िया--अरे हटो, एक तरफ हटो, मुझे जाने दो ।
गोपाल--कहां जा रही हो, माई ?
बुढ़िया—पढ़ने ।
गोविंद--तुम पढ़ोगी ! मुंह में दांत, न पेट में आंत । पका पान हो, आज मरी कल दूसरा दिन !
बुढ़िया--बेटा, पढ़ने के लिए कोई बूढ़ा नहीं होता । कहां है गुरुजी ? गुरुजी मैं आ गई ।
गुरुजी—आओ मां, यहां बैठो । कल तो आपने कई अक्षर सीख लिये थे ।
बुढ़िया—हां गुरुजी । मैं र भी लिख सकती हूं और म भी लिख सकती हूं । बस, राम लिखना चाहती हूं ।
गुरुजी—यह तुम्हने र जो लिखा है इसी के आगे पाई लगा दो । हां, ऐसे ही । यह आ की मात्रा है । र आ मिलाओ, र आ रा बन गया ।
बुढिया--(लिखते हुए) र लिखा और यह पाई लगाई तो यह हुआ रा ।
गुरुजी—अब लिखो म ।
बुढ़िया--म, र आ रा, म अ म, राम ।
गुरुजी--लीजिए, यह बन गया आपका राम।
बुढ़िया--(भावावेश में) यह राम बन गया राम, राम, राम । मैं फिर लिखूं र आ रा, म अ म, राम, राम,

राम··· (कहते-कहते रो पड़ती है)

गुरुजी—माता-माता, आप रोने क्यों लगीं ? क्या बात है?

बुढ़िया——(रोते-रोते) बेटा। मैं किसी दुख से नहीं रोई। यह तो खुशी का रोना है। मैंने आज अपने हाथ से राम लिखा है। आज मेरे पितर तर गये।

रामू दादा——वह बुढ़िया सच कहती थी। जो पढ़ना-लिखना सीख लेता है, उसके पितर क्या, उसकी जाति, उसका देश, सभी तर जाते हैं। पढ़ने से ज्ञान बढ़ता है। ज्ञान से पैदावार बढ़ती है। पैदावार बढ़ने से धन बढ़ता है। यही तो तरना है। आप

मुस्करा रहे हैं। जीहां, याद रखिए, बिना पढ़े आपके पितर आप, आपकी औलाद सब नर्क में पड़े रहेंगे। अब हम आजाद हैं। हमको राय देने का अधिकार है। आप तो जानते ही हैं कि जो लोग पढ़े-लिखे नहीं हैं, उन्हें राय देने में कितनी कठिनाई होती है। अभी जोगीपुर में कमेटी का चुनाव हुआ था। दो उम्मीदवार रामजस और धनपत। जनता रामजस को चाहती थी। लेकिन धनपत के पास धन था।

जनता--(पुकारते हुए) हम रामजस को मत देंगे। रामजस को मत देना प्रजातंत्र को मत देना है। धनपत को मत देना गुलामी को मत देना है।

रामजस का एजेंट--भाइयो, आप अंदर जाकर रामजस के आगे निशान लगावें। अफसर पूछें तो उन्हीं का नाम बतावें।

जनता--हां-हां, हम रामजस को ही मत देंगे।

एजेंट--अच्छा, आप लोग उधर बैठिए।

धनपत का मुंशी--आओ भाइयो, आओ। चाय पीओ, मिठाई खाओ।

जनता--किसकी मिठाई है?

मुंशी--पहले खाओ, फिर पूछना।

रामू दादा—यही हुआ। लोग वहां इकट्ठे हो गये। खूब खाया-पीया और फिर मत देने गये। जनता को यकीन था कि रामजस की जीत होगी। लेकिन जब परिणाम सुनाया गया तो धनपत सौ मतों से जीत गया था। मत देनेवाले अनपढ़ थे। नाम तो वे रामजस का लेते थे, लेकिन रामजस और धनपत में अंतर क्या है, वे यह नहीं समझते थे। दोनों लिखे हुए नाम उनके लिए एक जैसे थे। तो देखा आपने, अनपढ़ रहना कितना बड़ा पाप है। आओ, हम इस पाप को दूर करने का बीड़ा उठा लें। पाठशाला की राह भी न देखें। अपने घरों से ही यह काम शुरू करें। आप हंसिए नहीं, ऐसे गांव यहां पर हैं, जहां बच्चे पाठशाला से लौट कर अपने मां-बाप को पढ़ाते हैं। एक दिन वहां मैं अपने मित्र के घर गया था। शाम का वक्त था। उनका बालक पाठशाला से लौटा, किताबें रखीं और मां के पास पहुंचा।

बालक—माताजी, आपने आज दिन में क्या लिखा है?

मां—क से कलम और ख से खरबूजा।

बालक—अहा माताजी, आपने ख का रव बना दिया। ऊपर की लाइन मिला देनी चाहिए। अच्छा

बताओ, ख से और क्या होता है ?

मां--ख से होता है खरबूजा, खरगोश, खरल, खड़ाऊं, खंदक, खच्चर, खटिया, खपरेल और हां खत ।

बालक—माताजी, आपको तो बहुत आता है । अच्छा अब ग लिखो । ग से होता है गधा ।

मां--गधा, अरे गमला भी तो होता है ।

बालक--अजी, गमला ही क्यों, गलीचा भी याद कर लो । लेकिन अब मैं पिताजी का पाठ सुन लूं ।

पिताजी--मैंने तो कविता पढ़ी है । सुनाऊं ?

ओ नाना ओ नाना
जब तुम घंटाघर जाना

गोल गोल रसगुल्ले लाना
उनको खाकर पढ़ने जाऊं
राजा बेटा मैं कहलाऊं।

मां——(हंस कर) वाह! क्या कविता है। बेटे ने बाप को खूब राजा बेटा बनाया है!

पिता—हंसो मत। जो यह याद करावेंगे वही करना पड़ेगा। यह हमारे गुरुजी हैं।

बालक——हां, इसमें हंसने की क्या बात है? मैंने भी तो याद की थी। तुमको यह अच्छी नहीं लगती तो गुड़िया-वाली याद कर लो।

रामू दादा——देखा आपने, कैसे आज घर-घर में स्कूल खुल रहे हैं। इसी प्रकार होता रहा तो देश के पाप धुल जायंगे। हम पहले की तरह ऊंचे उठ जायंगे और संसार हमारी पूजा करेगा।

सब एक साथ——हां-हां, ऐसा ही होगा। हम आपको वचन देते हैं कि आज से हम पढ़ना-लिखना सीखेंगे। बालक, बूढ़े, सभी सीखेंगे।

(हंसते हैं गाते हैं)

'पढ़ेंगे-लिखेंगे होंगे नवाब',
'हांजी, पढ़ेंगे-लिखेंगे होंगे नवाब।'

समाज विकास - माला की पुस्तकें

सैंतीस नये पैसे